अमेरी फार्मास्यूटिकल्स एवं अन्य

बनाम

राजस्थान राज्य

16 मार्च 2001

[के.टी. थॉमस और आर.पी. सेठी, न्यायमूर्तिगण]

औषधि एवं प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 – धारा 18 ए, 23(4)(iii), 25, 27, 32 ए – खुदरा विक्रेता से प्राप्त दवा का नमूना मिलावटी, गलत ब्रांडेड और नकली पाया गया – निर्माता ने एक वितरक के माध्यम से खुदरा विक्रेता को दवा बेची – निर्माता के खिलाफ अभियोजन कार्यवाही – दवा का नमूना और सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट प्राप्त करने का निर्माता का अधिकार – अभिनिर्धारित, निर्माता सरकारी विश्लेषक का नमूना और रिपोर्ट प्राप्त करने का हकदार नहीं है – निर्माता के पास केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला को नमूना देने के लिए न्यायालय को निर्देश देने का वैकल्पिक उपाय है – अपराध को बरी करना विधायी कमी पर निर्माता सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होगा – भारत का संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21।

औषधि निरीक्षक ने औषधि एवं प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 के प्रावधानों के तहत नमूना लेने के उद्देश्य से एक मेडिकल रिटेल दुकान से एक दवा फॉर्मूलेशन खरीदा। एक सरकारी विश्लेषक द्वारा परीक्षण के बाद नमूना को गलत ब्रांड, मिलावटी और नकली पाया गया। अपीलकर्ता की चिंता दवा के निर्माता से जुड़ी थी, जिसने एक वितरक के माध्यम से इसे खुदरा विक्रेता को बेच दिया। अधिनियम की धारा 27 (बी), (सी) और (डी) के तहत अपराध के लिए अपीलकर्ता–संस्था और उसके मालिक, वितरक और खुदरा विक्रेता के खिलाफ निरीक्षक के पास शिकायत दर्ज की गई थी। दंडाधिकारी ने अपीलकर्ताओं के खिलाफ आरोप तय किए और शेष आरोपियों को आरोपमुक्त कर दिया। अपीलीय न्यायालय ने अपीलकर्ताओं की पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया लेकिन अधिनियम की धारा 27(सी) के तहत आरोप हटा दिया। उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ताओं की अपील खारिज कर दी।

इस न्यायालय में अपील में, अपीलकर्ताओं ने तर्क दिया कि निरीक्षक ने अपीलकर्ताओं को नमूने का एक हिस्सा नहीं दिया, जिस पर आरोप तय किए गए थे, जिससे सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की शुद्धता का परीक्षण करने का मूल्यवान अधिकार वंचित हो गया; अधिनियम की धारा 23(4)(iii) में निहित प्रावधानों का अनुपालन नहीं किया गया; नमूना न देने के आधार पर सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट बाध्यकारी नहीं होगी; अधिनियम में वह प्रावधान जो किसी अभियुक्त को किसी दस्तावेज़ में निहित तथ्यों की सत्यता को अस्वीकार करने से अक्षम करता है, अनुचित, और दमनकारी है; और यह संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत मौलिक अधिकार का उल्लंघन है।

प्रत्यर्थी–राज्य ने तर्क दिया कि अधिनियम के प्रावधानों के तहत सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों का खंडन करने के लिए, अभियोजन मामलों में निर्माता सबूत पेश कर सकते हैं।

अपील खारिज करते हुए, न्यायालय द्वारा

अभिनिर्धारित: 1. औषधि एवं प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 की धारा 18 ए के साथ पठित धारा 23(4) के तहत निरीक्षक का दायित्व है कि वह नमूने का एक हिस्सा उस व्यक्ति को दे, जिससे उसने नमूना लिया था, दूसरा हिस्सा सरकार को दे, तीसरा भाग न्यायालय को और चौथा भाग उस व्यक्ति को जिसका

नाम और पता आदि विक्रेता द्वारा बताया गया था। इस प्रकार, ऐसे मामले में जहां दवा, निर्माता से वितरक और फिर खुदरा विक्रेता के पास चली गई है, नमूने का कुछ भाग देने का निरीक्षक का दायित्व खुदरा विक्रेता को देने के साथ–साथ उस वितरक को भी देने पर समाप्त हो जाएगा जिससे खुदरा विक्रेता ने दवा खरीदी थी।

हरियाणा बनाम बृज लाल मित्तल, [1998] 5 एससीसी 343 का उल्लेख किया गया।

ड्रग्स निरीक्षक बनाम मैसर्स मोडेम ड्रग्स और अन्य, (1982) ड्रग्स केस 26 (मद्रास); *किरण देव सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य*, (1990) ड्रग्स केस 324 (एचपी) और *वेचा वेंकट राजू बनाम आंध्र प्रदेश राज्य*, (1994) ड्रग्स केस 94 (एपी), का उल्लेख किया गया है।

2. कोई भी कानूनी प्रावधान जो किसी दोषी व्यक्ति को किसी ऐसे साक्ष्य को अस्वीकार करने के लिए कोई उपाय दिए बिना फंसाता है जो उसे दंडित कर सकता है, उसे भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 21 में निहित दर्शन के अनुरूप अनुमोदित नहीं किया जा सकता है।

3. न्यायालय को ऐसी व्याख्या की ओर झुकना चाहिए जिससे किसी आरोपी को ऐसे सबूतों के खिलाफ किसी भी उपाय से वंचित करने के परिणामों को रोका जा सके। उसे ऐसे दस्तावेज़ में बताए गए तथ्यों को कम से कम प्रथम स्तर पर गलत साबित करने या खंडित करने का अधिकार होना चाहिए। प्रावधानों की व्याख्या इस प्रकार करना संभव है कि उसे उपचार उपलब्ध कराया जा सके। अधिनियम की धारा 25(3) में निहित निष्कर्ष को उपधारा में निर्दिष्ट व्यक्तियों के साथ जोड़कर पढ़ा जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, यदि सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति प्राप्त करने वाला कोई भी व्यक्ति रिपोर्ट प्राप्त होने के 28 दिनों की अवधि के भीतर रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों के उल्लंघन में सबूत पेश करने के अपने इरादे को सूचित करने में विफल रहता है, तब सरकारी विश्लेषक की ऐसी रिपोर्ट ऐसे व्यक्तियों के खिलाफ उसमें बताए गए तथ्यों के संबंध में निर्णायक सबूत बन सकती है। लेकिन जहां तक किसी आरोपी का सवाल है, मौजूदा मामले में निर्माता की तरह, जो सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति प्रदान करने का हकदार नहीं है, तो उसे रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों की सत्यता को, किसी भी अन्य तरीके से जिसके द्वारा ऐसे तथ्यों को अस्वीकृत किया जा सकता है, चुनौती देने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। वह न्यायालय से शेष नमूने के दूसरे हिस्से को केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला में परीक्षण के लिए भेजने का अनुरोध करके अधिनियम की धारा 25 की उप–धारा (4) में बताए गए उपाय का भी लाभ उठा सकता है। निःसंदेह, यदि अनुरोध लंबे विलंब के बाद किया जाता है, तो कोई भी न्यायालय उक्त नमूने का परीक्षण कराने के लिए बाध्य नहीं है। इसी उद्देश्य से न्यायालय को यह निर्णय लेने का विवेकाधिकार दिया गया है कि क्या ऐसे अनुरोध के आधार पर ऐसा नमूना केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला को भेजा जाना चाहिए। हालाँकि, एक बार जब नमूने का परीक्षण केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला में किया जाता है और अधिनियम की धारा 25(4) में परिकल्पित एक रिपोर्ट न्यायालय में पेश की जाती है, तो उस उप–धारा में उल्लिखित निष्कर्ष निर्विवाद हो जाएगा।

4. जब प्रावधान की व्याख्या इस तरह से की जा सकती है कि बेतुके परिणामों को रोका जा सके तो निषिद्ध दवाओं के निर्माताओं को तकनीकी आधार पर बरी करना आपराधिक न्याय के हित के लिए अनुकूल नहीं है, कुछ स्थितियों में निर्माता को सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति प्रदान करना, कानून में कोई खामी है। ऐसे अपराधी निर्माताओं को केवल विधायी कमी के आधार पर बरी करने का तरीका अपनाना (यदि यह कमी है तो) सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होगा और उन रोगियों का जीवन खतरे में पड़ जाएगा जिन्हें चिकित्सा चिकित्सकों द्वारा दवाएं लिखी जाती हैं। इसलिए, जब विधायी प्रावधान व्याख्या करने में सक्षम है, तो अदालतों को क़ानून द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों के अनुसार आपराधिक न्याय प्रदान करने में असहाय महसूस करने की आवश्यकता नहीं है।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 300/2001

एस.बी. आपराधिक विविध याचिका संख्या 1034/1998 में राजस्थान उच्च न्यायालय के दिनांक 25.10.99 के निर्णय और आदेश से।

उपस्थित पक्षों की ओर से समीक्षा आवेदनन त्रिवेदी, अतिरिक्त महा न्यायभिकर्ता, आलोक सिंह, वीबी जोशी, सुशील कुमार जैन, हेमानी शर्मा और डीएस माबरा शामिल हुए।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

न्यायाधीश थॉमस, द्वारा– अनुमति प्रदान की गई।

अपीलकर्ता, एक फार्मास्युटिकल कंपनी, एक औषधि निरीक्षक द्वारा उसके खिलाफ शुरू की गई अभियोजन कार्यवाही को अब तक एक दशक से भी अधिक समय तक रोकने में सफल रही, और मुकदमा वहीं रुका हुआ है जहां से शुरू हुआ था। इस बीच अपीलकर्ता कंपनी और उसके मालिक न्यायिक पदानुक्रम के सभी स्तरों को पार करते हुए सर्वोच्च न्यायालय तक पहुंच गए और इन सभी मंचों पर, उनके खिलाफ शुरू किए गए अभियोजन की स्थिरता के बारे में उन्हें एक तकनीकी आपत्ति है।

घटनाएँ 30–4–1998 को शुरू हुईं जब एक ड्रग्स निरीक्षक ने कोटा (राजस्थान) में एक मेडिकल रिटेल दुकान का दौरा किया और व्यापार नाम "अशोक लिक्विड एक्सट्रैक्ट" से एक दवा फॉर्मूलेशन खरीदा। उक्त खरीदारी औषधि एवं प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940 (संक्षेप में "अधिनियम") के प्रावधानों के तहत इसका नमूना लेने के उद्देश्य से की गई थी। जब नमूने के एक हिस्से का परीक्षण सरकारी विश्लेषक (जयपुर) द्वारा किया गया तो उन्होंने बताया कि नमूना "गलत ब्रांड, मिलावटी और नकली दवा" था। खुदरा विक्रेता ने मेसर्स चेलन मेडिकल स्टोर्स, कोटा (वितरक या थोक विक्रेता के रूप में) के पते का खुलासा किया, जहां से दवा प्राप्त की गई थी। संपर्क करने पर उक्त वितरक ने दवा के निर्माताओं के रूप में अपीलकर्ता कंपनी और उसके मालिक का नाम बताया।

निरीक्षक द्वारा अधिनियम की धारा 27(बी), (सी) और (डी) के तहत अपराध के लिए सभी व्यक्तियों के खिलाफ 5.12.1990 को शिकायत दर्ज की गई थी। प्रारंभिक चरण में दलीलें सुनने के बाद परीक्षण दंडाधिकारी ने अकेले अपीलकर्ताओं के खिलाफ उपरोक्त अपराधों के लिए आरोप तय किया और शेष आरोपियों को बरी कर दिया गया। इसके बाद अपीलकर्ताओं ने सत्र न्यायालय के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका दायर की जिसमें कहा गया कि उनके खिलाफ कोई आरोप तय नहीं किया जा सकता था क्योंकि निरीक्षक ने नमूने का एक हिस्सा अपीलकर्ताओं को नहीं भेजा या दिया और इस तरह धारा 23(4)(iii) में निहित अनिवार्य प्रावधान अधिनियम का अनुपालन नहीं किया गया। सत्र न्यायाधीश ने उक्त विवाद के साथ–साथ कुछ अन्य तर्कों को भी खारिज कर दिया (जो प्रासंगिक नहीं हैं क्योंकि बाद में अपीलकर्ताओं द्वारा उनका पालन नहीं किया गया)। बहरहाल, सत्र न्यायाधीश ने विचार व्यक्त किया कि यह दिखाने के लिए कोई तथ्य नहीं है कि दवा नकली है। इसलिए अधिनियम की धारा 27(सी) के तहत गिनती को आरोप से हटा दिया गया, जबकि शेष गिनती को सत्र न्यायाधीश द्वारा 23.11.1995 को पारित आदेश के अनुसार बरकरार रखा गया।

इसके बाद अपीलकर्ताओं ने इस तर्क पर ध्यान केंद्रित करते हुए आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत राजस्थान उच्च न्यायालय का रुख किया कि अधिनियम की धारा 23(4)(iii) में निहित प्रावधान का अनुपालन इस आधार पर नहीं किया गया था कि निरीक्षक नमूने का एक हिस्सा अपीलकर्ताओं

को नहीं दिया। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने उक्त तर्क को मानने से इनकार कर दिया और इस अपील में दिए गए आदेश के अनुसार अपीलकर्ताओं द्वारा दायर याचिका को खारिज कर दिया।

अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री आलोक सिंह ने तर्क दिया कि निर्माता, जो शिकायत में आरोपी के रूप में शामिल है, को नमूने के एक हिस्से की आपूर्ति न करने के परिणामस्वरूप उन्हें रिपोर्ट की शुद्धता का परीक्षण करने के मूल्यवान अधिकार से वंचित कर दिया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि इस तरह की गैर–आपूर्ति का परिणाम यह है कि सरकारी विश्लेषक द्वारा उल्लिखित निष्कर्षों के संबंध में कानून द्वारा संलग्न निष्कर्ष खो गया है और सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट निर्माता पर बाध्यकारी नहीं होगी। उपरोक्त तर्क की सत्यता की जांच करने के लिए हम अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों को देख सकते हैं।

अधिनियम की धारा 27 ऐसे व्यक्ति को, जो बिक्री के लिए या वितरण के लिए निर्माण करता है, या जो किसी मिलावटी या नकली दवा को बेचता है या संग्रह करता है या बिक्री के लिए पेश करता है, कारावास की सजा का भागी बनाता है, जो एक वर्ष से कम नहीं होगी, हालांकि अधिकतम प्रदान किया गया है। अधिनियम की धारा 23 एक निरीक्षक को परीक्षण या विश्लेषण के उद्देश्य से किसी भी दवा का नमूना लेने का अधिकार देती है। धारा 25 एक सरकारी विश्लेषक को, जिसके पास नमूने का एक हिस्सा परीक्षण के लिए प्रस्तुत किया गया है, परीक्षण या विश्लेषण में पाए गए तथ्यों को बताते हुए, तीन प्रतियों में निरीक्षक को एक रिपोर्ट देने का अधिकार देता है।

अधिनियम की धारा 25(2) में कहा गया है कि निरीक्षक रिपोर्ट की एक प्रति उस व्यक्ति को देगा जिससे नमूना लिया गया था, रिपोर्ट की दूसरी प्रति उस व्यक्ति को देगा जिसका नाम और पता निरीक्षक को बताया गया है। तीसरी प्रति नमूने के संबंध में किसी भी अभियोजन में उपयोग के लिए निरीक्षक द्वारा रखी जाएगी। अधिनियम की धारा 25(3) इस प्रकार है:

> "इस अध्याय के तहत एक सरकारी विश्लेषक द्वारा हस्ताक्षरित रिपोर्ट होने का दावा करने वाला कोई भी दस्तावेज़, उसमें बताए गए तथ्यों का सबूत होगा, और ऐसे सबूत तब तक निर्णायक होंगे जब तक कि वह व्यक्ति जिससे नमूना लिया गया था या वह व्यक्ति जिसके नाम, पता और अन्य विवरण का, धारा 18 ए के तहत खुलासा किया गया है, रिपोर्ट की एक प्रति प्राप्त होने के अट्ठाईस दिनों के भीतर, निरीक्षक या न्यायालय को लिखित रूप में सूचित किया गया है जिसके समक्ष नमूने के संबंध में कोई कार्यवाही लंबित है कि वह विवाद में सबूत पेश करने का इरादा रखता है।"

अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि उप–धारा में परिकल्पित सरकारी विश्लेषक की निष्कर्ष रिपोर्ट में निष्कर्षों के साथ निर्माता को परेशान करेगी क्योंकि वह अन्यथा उक्त निष्कर्षों पर विवाद करने से अक्षम हो जाएगा, क्योंकि उसके पास नमूने के एक हिस्से की उसके पास अनुपस्थिति के कारण ऐसे निष्कर्षों को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं है।

उपरोक्त तर्क इस गलत धारणा पर आधारित है कि सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट के खिलाफ चुनौती का तरीका विक्रेता (जिस व्यक्ति से नमूना लिया गया था) के पास रखे गए नमूने के हिस्से को भेजना है। उप–धारा (3) की आवश्यकता यह है कि जिन व्यक्तियों को रिपोर्ट की प्रति दी गई है, उनमें से एक, यदि वह रिपोर्ट को चुनौती देना चाहता है, तो उसे विचारण न्यायालय या संबंधित निरीक्षक को साक्ष्य प्रस्तुत करने के इरादे से सूचित करना होगा। यदि वह सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति प्राप्त होने के 28 दिनों के भीतर ऐसा नहीं करता है तो इसका परिणाम यह होगा कि रिपोर्ट में शामिल तथ्य उन व्यक्तियों के विरुद्ध निर्णायक हो जायेंगे। दिए जाने वाले नोटिस में संबंधित व्यक्ति का इरादा, "रिपोर्ट के विवाद में साक्ष्य प्रस्तुत करना" बताया जाएगा। यदि ऐसा कोई नोटिस दिया जाता है, तो यह नोटिस देने वाले व्यक्ति के लिए खुला है कि वह

रिपोर्ट में निष्कर्षों का खंडन करने के उद्देश्य से कोई सबूत पेश कर सके। लेकिन यदि ऐसा व्यक्ति 28 दिनों की उक्त अवधि के भीतर ऐसा कोई नोटिस देने में विफल रहता है तो रिपोर्ट में दिए गए निष्कर्ष उस व्यक्ति के खिलाफ निर्णायक सबूत के रूप में काम करेंगे जो ऐसा नोटिस देने में विफल रहा।

रिपोर्ट को चुनौती देने का एक तरीका धारा 25 की उपधारा (4) में दर्शाया गया है। यह इस प्रकार है:

> "औषधि प्रयोगशाला, जहां किसी व्यक्ति ने उप–धारा (3) के तहत सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट के विवाद में साक्ष्य जोड़ने के अपने इरादे को अधिसूचित किया है, न्यायालय अपनी स्वयं की गति से या अपने विवेक से शिकायतकर्ता या आरोपी में से किसी एक के अनुरोध पर ऐसा कर सकती है। धारा 23 की उपधारा (4) के तहत दंडाधिकारी के समक्ष पेश किए गए दवा या कॉस्मेटिक के नमूने को उक्त प्रयोगशाला में परीक्षण या विश्लेषण के लिए भेजा जाएगा, जो परीक्षण या विश्लेषण करेगा और हस्ताक्षरित लिखित रिपोर्ट देगा, या उसके तहत प्राधिकारी, केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला के निदेशक उसके परिणाम देंगे, और ऐसी रिपोर्ट उसमें बताए गए तथ्यों का निर्णायक साक्ष्य होगी।"

यदि जिस व्यक्ति को सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति दी गई थी, वह रिपोर्ट को चुनौती देने के अपने इरादे को सूचित करता है तो यह न्यायालय के लिए खुला है कि वह न्यायालय में रखे गए नमूने के हिस्से को केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला को भेज दे। उप–धारा में आगे परिकल्पना की गई है कि आपराधिक कार्यवाही में शामिल कोई भी पक्ष (आरोपी और साथ ही शिकायतकर्ता) न्यायालय से अनुरोध कर सकता है कि निरीक्षक द्वारा दंडाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किए गए केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला के नमूने का हिस्सा न्यायालय को भेजा जा सकता है। जब उक्त केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला विश्लेषण या परीक्षण करने के बाद एक रिपोर्ट भेजती है, तो उसमें मौजूद तथ्य निर्णायक साक्ष्य बन जाते हैं।

इस संदर्भ में दवा या औषधि आदि का नमूना लेते समय निरीक्षक के लिए निर्धारित प्रक्रिया का उल्लेख करना उपयोगी है। अधिनियम की धारा 23 में पालन की जाने वाली प्रक्रिया शामिल है। यदि नमूना किसी खुदरा विक्रेता या वितरक से लिया गया है, तो निरीक्षक नमूने को चार भागों में विभाजित करेगा, उन्हें सील करेगा और चिह्नित करेगा और जिस व्यक्ति से नमूना लिया गया था उसे नमूने के ऐसे हिस्सों पर अपनी मुहर या निशान लगाने की अनुमति देगा। धारा 23 की उपधारा (4) अब संदर्भित किया जाने वाला प्रासंगिक प्रावधान है। यह इस प्रकार है:

> "निरीक्षक इस प्रकार विभाजित नमूने का एक भाग या एक कंटेनर, जैसा भी मामला हो, उस व्यक्ति को लौटा देगा जिससे वह इसे लेता है, और शेष को अपने पास रखेगा और निम्नानुसार उसका निस्तारण करेगा:–
>
> (i) एक भाग या कंटेनर वह तुरंत परीक्षण या विश्लेषण के लिए सरकारी विश्लेषक को भेजेगा;
>
> (ii) दूसरे को वह उस न्यायालय में प्रस्तुत करेगा जिसके समक्ष दवा या कॉस्मेटिक के संबंध में कार्यवाही, यदि कोई हो, शुरू की गई है; और
>
> (iii) तीसरा, वह उस व्यक्ति को भेजेगा, यदि कोई हो, जिसके नाम, पता और अन्य विवरण का, धारा 18 ए के तहत खुलासा किया गया है।"

इस संदर्भ में अधिनियम की धारा 18 ए को भी निकालना आवश्यक है जो इस प्रकार है:

> "*18 ए. निर्माता, आदि के नाम का खुलासा* – प्रत्येक व्यक्ति, जो किसी दवा या कॉस्मेटिक का निर्माता या उसके वितरण के लिए उसका प्रतिनिधि नहीं है, यदि आवश्यक हो, तो निरीक्षक को उस व्यक्ति के नाम, पता और अन्य विवरण का खुलासा करेगा जिससे उसने दवा या कॉस्मेटिक प्राप्त किया।"

इस प्रकार, निरीक्षक का दायित्व है कि वह नमूने का एक हिस्सा उस व्यक्ति को दे जिसका नाम आदि उस व्यक्ति के रूप में प्रकट किया गया है जिससे विक्रेता ने दवा प्राप्त की थी। प्रावधान की आवश्यकता तब पूरी होगी जब निरीक्षक नमूने का एक हिस्सा उस व्यक्ति को देगा जिससे उसने नमूना लिया था, और दूसरा हिस्सा सरकारी विश्लेषक को और तीसरा हिस्सा न्यायालय को भेज देगा (जिसके सामने अभियोजन चल रहा है) और चौथा भाग उस व्यक्ति को जिसका नाम और पता आदि विक्रेता द्वारा प्रकट किया गया था। यह स्थिति बहुत स्पष्ट कर दी गई है जैसा कि अधिनियम की धारा 23 की उपधारा (3) के पहले प्रावधान से देखा जा सकता है। उस प्रावधान में कहा गया है कि "जहां नमूना उस परिसर से लिया जाता है जहां दवा का निर्माण किया जा रहा है, नमूने को केवल तीन भागों में विभाजित करना आवश्यक होगा" (जोर दिया गया)। ऐसे मामले में एक हिस्सा निर्माता को दिया जाएगा और शेष दो हिस्से उप–धारा (4) के खंड (i) और खंड (ii) के अनुसार निपटाए जाएंगे, यानी एक हिस्सा सरकार को भेजा जाएगा। विश्लेषक और दूसरे को न्यायालय में पेश किया जाएगा। ऐसे मामले में, उपधारा के खंड (iii) की कोई उपयोगिता नहीं है। ऐसी स्थिति में तीसरे उपवाक्य की अनुपयोगिता का यह पहलू उस उपवाक्य में प्रयुक्त शब्दों से ही बढ़ जाता है, (अर्थात "जहाँ लिया गया है")। दूसरे शब्दों में, जहाँ इसे नहीं लिया जाता, उस उपवाक्य की कोई उपयोगिता नहीं होती।

इस प्रकार, ऐसे मामले में जहां ड्रंग या दवा निर्माता से थोक विक्रेता (वितरक) और फिर खुदरा विक्रेता के पास गई है, नमूने के कुछ हिस्से देने के लिए निरीक्षक (जो खुदरा विक्रेता से नमूना लेता है) का दायित्व, इसे खुदरा विक्रेता और वितरक (जिससे खुदरा विक्रेता ने दवा खरीदी थी) को देकर समाप्त हो जायेगा।

यह तर्क दिया गया कि चूंकि एक निर्माता सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति प्राप्त करने का अधिकार नहीं रखता है (जब नमूना खुदरा विक्रेता से लिया गया था) तो निर्माता रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों की शुद्धता को चुनौती देने से अक्षम हो जाएगा। और इस तरह के अभाव के उसे गंभीर परिणाम भुगतने होंगे क्योंकि रिपोर्ट में बताए गए तथ्य उसके खिलाफ निर्णायक सबूत बन जाएंगे। विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि ऐसा प्रावधान जो किसी अभियुक्त को दस्तावेज़ में निहित तथ्यों की सत्यता को अस्वीकार करने से अक्षम करता है, जो उसे दंडित करेगा, दमनकारी होने के अलावा अनुचित है। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, यह संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित मौलिक अधिकार का उल्लंघन है।

उपरोक्त तर्क के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने कुछ निर्णयों का हवाला दिया। *ड्रग्स निरीक्षक बनाम मेसर्स मोडेम ड्रग्स और अन्य,* (1982) ड्रग्स केस 26 मद्रास में, मद्रास उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने एक निर्माता की ओर से उठाए गए विवाद पर विचार किया, जिसे अधिनियम की धारा 27 के तहत दोषी ठहराया गया था, कि सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति और नमूने के एक हिस्से की आपूर्ति न करने से उसे, रिपोर्ट की सत्यता को चुनौती देने के अधिकार से वंचित कर दिया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने औषधि निरीक्षक की कठिनाई की परिशीलन करते हुए, जो कानून द्वारा नमूने के अधिकतम चार भाग बनाने के लिए बाध्य था, कहा है कि विधायिका को वर्तमान मामले की तरह एक मामले की परिकल्पना करनी चाहिए थी जहां कई आरोपी व्यक्ति, नमूने का प्रत्येक भाग और सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति पाने के हकदार हैं। विद्वान एकल न्यायाधीश ने आगे सुझाव दिया कि अधिनियम में दोष में सुधार की आवश्यकता है। यह कहने के बाद कि यह विधायिका का काम है न कि न्यायाधीश का, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता निर्माता को बरी करने का फैसला किया है।

किरण देव सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, (1990) ड्रग्स केस 324 (एचपी) में, हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने इस प्रकार निर्णय दिया:

"अधिनियम के प्रावधानों को, जब इसकी योजना के आलोक में पढ़ा जाता है, तो यह स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि औषधि निरीक्षक के लिए विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति और साथ ही नमूने का एक हिस्सा, निर्माता को उपलब्ध कराना अनिवार्य है, जहां निरीक्षक द्वारा दायर की गई शिकायत में एक पक्ष बनाकर उसके खिलाफ प्रारंभिक चरण में वास्तव में कार्रवाई करने से पहले उसकी पहचान ज्ञात हो जाती है। यह कानून का आदेश है, ऐसा न हो कि निर्माता बचाव के प्रभावी अवसर से वंचित हो जाए प्रभाव यह है कि उसके द्वारा निर्मित दवा, जिसमें से नमूना लिया गया था, में गुणवत्ता के आवश्यक मानक की कमी नहीं है। निर्माता को उचित अवधि के भीतर रिपोर्ट और उसके उत्पाद से लिए गए नमूने के एक हिस्से तक पहुंच होनी चाहिए ताकि वह विश्लेषक की रिपोर्ट के विवाद में साक्ष्य जोड़ने के अधिकार का प्रयोग कर सके, जिसमें उसके उत्पाद को आवश्यक मानकों की कमी के रूप में वर्णित किया गया है।"

विद्वान अतिरिक्त महा न्यायभिकर्ता, श्री समीक्षा आवेदनन त्रिवेदी ने तर्क दिया कि निर्णयों में की गई टिप्पणियाँ अनुमोदित नहीं की जा सकतीं क्योंकि निर्माता के खिलाफ अभियोजन मामलों में यह खुला है कि वह अधिनियम की धारा 25(3) और (4) में बताए गए तरीके से सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों पर विवाद करने के लिए सबूत पेश कर सके। विद्वान अतिरिक्त महा न्यायभिकर्ता ने हमारा ध्यान *हरियाणा राज्य बनाम बृज लाल मित्तल,* [1998] 5 एससीसी 343 में इस न्यायालय की न्यायमूर्ति की पीठ के फैसले की ओर आकर्षित किया। उस निर्णय में हमारे सामने जो मुद्दा उठाया गया था, वह इसलिये नहीं उठा, क्योंकि तथ्यों पर उसमें यह स्वीकार किया गया था कि निर्माता को सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति दी गई थी, लेकिन उसने उक्त रिपोर्ट के विवाद में सबूत पेश करने के अपने इरादे को सूचित नहीं किया था। इस मामले में बताई गई कानूनी स्थिति उस स्थिति से संबंधित है जहां निरीक्षक ने निर्माता को रिपोर्ट की प्रति नहीं दी क्योंकि ऐसा करने के लिए उसके पास कोई कानूनी दायित्व नहीं था। अब हमें दोनों पक्षों के विवाद की गंभीरता से जांच करनी होगी, विशेष रूप से पूर्वोक्त उच्च न्यायालयों के निर्णयों में की गई टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए।

अधिनियम की धारा 25(3) कहती है कि सरकारी विश्लेषक द्वारा हस्ताक्षरित रिपोर्ट होने का दावा करने वाला कोई भी दस्तावेज़ उसमें बताए गए तथ्यों का सबूत होगा "और ऐसे सबूत निर्णायक होंगे"। उप–धारा में प्रदान किया गया एकमात्र अपवाद यह है कि, जिस व्यक्ति से नमूना लिया गया था या वह व्यक्ति जिसका नाम, आदि धारा 18 ए के तहत प्रकट किया गया है, लिखित रूप में नोटिस देता है कि वह रिपोर्ट के विवाद में सबूत पेश करने का इरादा रखता है, उसे इसका खंडन करने की स्वतंत्रता है। बेशक इस तरह का नोटिस देने के लिए एक समय सीमा तय है। प्रावधान के मुताबिक रिपोर्ट की प्रति मिलने के 28 दिन के भीतर ऐसा नोटिस दिया जाएगा।

जब किसी स्थिति में कोई निर्माता सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति प्राप्त करने का अधिकार नहीं रखता है, जैसा कि इस मामले में हुआ, तो वह रिपोर्ट को चुनौती देने के उद्देश्य से क्या कर सकता है? एक और स्थिति है जब किसी निर्माता को मामले में दोषी ठहराया जा सकता है। अधिनियम की धारा 32 ए में इसकी परिकल्पना की गई है। यह इस प्रकार है:

"*32 ए. निर्माता आदि को पक्षकार बनाने की न्यायालय की शक्ति* – जहां, इस अध्याय के तहत किसी भी अपराध के परीक्षण के दौरान किसी भी समय किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा किया गया हो, जो किसी दवा या कॉस्मेटिक का निर्माता या उसका प्रतिनिधि न हो उसके वितरण के बाद, न्यायालय उसके समक्ष पेश किए गए साक्ष्यों पर संतुष्ट है कि ऐसा निर्माता या प्रतिनिधि भी उस अपराध में शामिल है, तो, न्यायालय, उपधारा (1),(2) और (3) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 319

के तहत, उसके खिलाफ इस तरह आगे बढ़ें जैसे कि धारा 32 के तहत उसके खिलाफ अभियोजन शुरू किया गया हो।"

ऐसा निर्माता, जिसे उपरोक्त प्रावधान के अनुसार पक्षकार बनाया गया है, क्या करेगा, जब वह भी नमूने के एक हिस्से या यहां तक कि सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति प्रदान करने का हकदार नहीं है?

अधिनियम की धारा 25(3) में प्रयुक्त शब्दों "ऐसे साक्ष्य निर्णायक होंगे" के निहितार्थ की सीमा को अब समझना होगा। साक्ष्य अधिनियम की धारा 4 कहती है कि जब उक्त अधिनियम द्वारा एक तथ्य को दूसरे तथ्य का निर्णायक सबूत घोषित किया जाता है, तो न्यायालय एक तथ्य के साबित होने पर दूसरे तथ्य को साबित मानेगी और उसके खंडन करने के उद्देश्य से, साक्ष्य देने की अनुमति नहीं देगी।" अधिनियम की धारा 25(3) में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "निर्णायक साक्ष्य" का एक अलग निहितार्थ नहीं हो सकता क्योंकि विधायी इरादा अलग नहीं हो सकता। वैधानिक प्रावधानों की व्याख्या में "निर्णायक" शब्द का ऐसा आयात अब रुक गया है। यदि ऐसा है, तो क्या होगा यदि निर्माता को दस्तावेज़ में शामिल तथ्यों को चुनौती देने से अक्षम कर दिया जाए, जिसके गंभीर परिणाम तब होंगे जब उसे मुकदमे में दोषी ठहराया जाएगा। कोई भी कानूनी प्रावधान जो किसी दोषी व्यक्ति को सबूतों की उस वस्तु को अस्वीकार करने के लिए कोई उपाय दिए बिना फंसाता है जो उसे दंडित कर सकती है, उसे संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित दर्शन के अनुरूप अनुमोदित नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में अदालतों को जो पहला प्रयास शुरू करना चाहिए, वह प्रावधान को अनुच्छेद 21 के अधीन बनाने के लिए इसे कमजोर करने के लिए व्याख्या की शक्ति का उपयोग करना है।

न्यायालय को ऐसी व्याख्या की ओर झुकना चाहिए जिससे किसी आरोपी को ऐसे सबूतों के खिलाफ किसी भी उपाय से वंचित करने के परिणामों को रोका जा सके। उसे ऐसे दस्तावेज़ में बताए गए तथ्यों को कम से कम प्रथम स्तर पर गलत साबित करने या खंडित करने का अधिकार होना चाहिए। प्रावधानों की व्याख्या इस प्रकार करना संभव है कि उसे उपचार उपलब्ध कराया जा सके। अधिनियम की धारा 25(3) में निहित निष्कर्ष को उपधारा में निर्दिष्ट व्यक्तियों के साथ जोड़कर पढ़ा जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, यदि सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति प्राप्त करने वाला कोई भी व्यक्ति रिपोर्ट प्राप्त होने के 28 दिनों की अवधि के भीतर रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों के उल्लंघन में सबूत पेश करने के अपने इरादे को सूचित करने में विफल रहता है, तब सरकारी विश्लेषक की ऐसी रिपोर्ट ऐसे व्यक्तियों के खिलाफ उसमें बताए गए तथ्यों के संबंध में निर्णायक सबूत बन सकती है। लेकिन जहां तक किसी आरोपी का सवाल है, मौजूदा मामले में निर्माता की तरह, जो सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति प्रदान करने का हकदार नहीं है, तो उसे रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों की सत्यता को, किसी भी अन्य तरीके से जिसके द्वारा ऐसे तथ्यों को अस्वीकृत किया जा सकता है, चुनौती देने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। वह न्यायालय से शेष नमूने के दूसरे हिस्से को केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला में परीक्षण के लिए भेजने का अनुरोध करके अधिनियम की धारा 25 की उप–धारा (4) में बताए गए उपाय का भी लाभ उठा सकता है। निःसंदेह, यदि अनुरोध लंबे विलंब के बाद किया जाता है, तो कोई भी न्यायालय उक्त नमूने का परीक्षण कराने के लिए बाध्य नहीं है। इसी उद्देश्य से न्यायालय को यह निर्णय लेने का विवेकाधिकार दिया गया है कि क्या ऐसे अनुरोध के आधार पर ऐसा नमूना केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला को भेजा जाना चाहिए। हालाँकि, एक बार जब नमूने का परीक्षण केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला में किया जाता है और अधिनियम की धारा 25(4) में परिकल्पित एक रिपोर्ट न्यायालय में पेश की जाती है, तो उस उप–धारा में उल्लिखित निष्कर्ष निर्विवाद हो जाएगा।

वेटचा वेंकट राजू बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (1994) ड्रग्स केस 94 (एपी) में एक निर्माता पर वर्तमान मामले के समान स्थिति में मुकदमा चलाया गया था और उसे विचारण न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया था,

जिसकी पुष्टि सत्र न्यायालय ने की थी। उन्होंने आंध्र प्रदेश के उच्च न्यायालय के समक्ष एक तर्क उठाया कि उन्हें अधिनियम की धारा 25 (4) के तहत प्रदान किए गए केंद्रीय औषधि प्रयोगशाला द्वारा नमूने की जांच कराने के मूल्यवान अधिकार का प्रयोग करने से रोका गया है क्योंकि नमूने का हिस्सा या प्रतिलिपि रिपोर्ट उन्हें उपलब्ध नहीं करायी गयी। उक्त तर्क के विपरीत उस मामले में लोक अभियोजक ने बताया कि यदि किसी अन्य निर्माता पर भी अधिनियम की धारा 32 ए के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए मुकदमा चलाया जाता है तो वह भी ऐसी विकलांगता के तहत होगा क्योंकि उसे ऐसी स्थिति में रिपोर्ट की एक प्रति प्रदान करने का कोई प्रावधान नहीं है। उपरोक्त तर्कों के मद्देनजर आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने कहा कि यदि निर्माता पर अधिनियम की धारा 32 ए के अनुसार मुकदमा चलाया जाता है तो वह रिपोर्ट की एक प्रति प्रदान किए जाने के अधिकार का दावा नहीं कर सकता है, लेकिन यदि धारा 18 ए के तहत किए गए खुलासे के परिणामस्वरूप उस पर मुकदमा चलाया जाता है तो ऐसा निर्माता नमूने के एक हिस्से के साथ–साथ सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की एक प्रति का भी हकदार होगा। विद्वान एकल न्यायाधीश के अनुसार, जिस निर्माता को धारा 18 ए के अनुसार आरोपी बनाया गया था, उसे ऐसी चीजों की आपूर्ति करने में विफलता संकेत के लिए पूर्वाग्रह का कारण बन सकती है। लेकिन विद्वान एकल न्यायाधीश के अनुसार, अधिनियम की धारा 32 ए के तहत आरोपित किसी निर्माता द्वारा ऐसा कोई पूर्वाग्रह पैदा नहीं किया जा सकता है। परिणामस्वरूप, उस मामले में निर्माता को दी गई दोषसिद्धि और सजा को उच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया।

हम एक निर्माता, जिसे पहली बार में ही आरोपी के रूप में दोषी ठहराया गया है और एक अन्य निर्माता, जिसे अधिनियम की धारा 32 ए के तहत शक्तियों के प्रयोग में दोषी ठहराया गया है, के बीच चुनौती देने के उसके अधिकार के संबंध में अंतराल खींचने के औचित्य को समझने में असमर्थ हैं। रिपोर्ट को चुनौती देने के अधिकार के तौर पर, ऐसे दोनों निर्माताओं को उपलब्ध होना चाहिए जिन पर अपराध के लिए मुकदमा चलाया गया है।

जब प्रावधान की व्याख्या इस तरह से की जा सकती है कि ऊपर बताए गए तरीके से बेतुके परिणामों को रोका जा सके तो निषिद्ध दवाओं या दवाओं के निर्माताओं को तकनीकी आधार पर बरी करना आपराधिक न्याय के हित के लिए अनुकूल नहीं है कि इसमें कोई खामी है। कुछ स्थितियों में निर्माता को सरकारी विश्लेषक की रिपोर्ट की प्रति न देकर कानून। ऐसे अपराधी निर्माताओं को केवल विधायी कमी के आधार पर बरी करने का तरीका अपनाना (यदि यह कमी है तो) सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होगा और उन रोगियों का जीवन खतरे में पड़ जाएगा जिन्हें चिकित्सा चिकित्सकों द्वारा दवाएं लिखी जाती हैं। इसलिए, जब विधायी प्रावधान की व्याख्या करने में सक्षम है जैसा कि हमने अब किया है, तो अदालतों को क़ानून द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों के अनुसार आपराधिक न्याय प्रदान करने में असहाय महसूस करने की आवश्यकता नहीं है।

परिणामस्वरूप हम इस अपील को खारिज करते हैं।

बी.एस. अपील खारिज।

विक्रांत ठाकुर की देखरेख में सुमीत कपूर द्वारा अनुवादित।